माता

लेखिका - सौ. मीना गरीबे (जैन) अकोला.
हिन्दी रुपान्तरकार - जमनालाल जैन, सारनाथ (वाराणसी)

संजय की दुर्घटना मे मृत्यु हो गयी । खबर पढकर संगीता स्तब्ध रह गयी । आँखो के आगे पिछला सारा घटनाचक्र घूम गया । उसकी आँखों के सामने कुन्दा बूआ या, मां की करूण मूर्ति खडी हो गयी । उसने तय किया कि उनको सान्त्वना प्रदान करने और ढाढस बंधाने के लिए जाना चाहिए । प्रसन्न ने उसे समझाने का बहुत प्रयत्न किया । कहा, 'संगीता, तेरे वहाँ जाने से वहाँ के लोग चाहे जैसा सन्देह करेंगे, चर्चा करेंगें ! तलाक दिये हुए पति की मृत्यु से दुःखी होकर तुम मिलने आयी हो, सभी को वही लगेगा । कोई कुछ भी कहे, उसे सुनने और सहने की मानसिक तैयारी रखनी होगी । या फिर लोगों के आने जाने की भीड भाड कम होने पर माँ से मिलने चलेंगे ।'

'नही ! नही !!' मुझे तत्काल जाना है माँ से मिलने । मुझे परवाह नहीं है किसी की चर्चा या गलतफहमी की । माँ पर तो दुःख का पहाड ही टूट पडा है । कितने कष्ट सहे है उस माँ ने । उसके प्राणों को कभी सुख-शांति या समाधान की हवा तक नही लगी है । मैं जानती हूँ, उसका तो कलेजा ही फट गया होगा । नही, मुझे तो जाना ही चाहिए । मेरे जाने से उसे सहारा मिलेगा, दुःख हलका होगा । तुम जानते हो, मुझ पर जब संकट आया था, तब वही माँ पहाड की तरह मरे पीछे खडी हो गयी थी । केवल उसीके कारण, मैं आज सुख की सांस ले रही हूँ । तुम जैसा समझदार पति, ये दो सुन्दर सलोने बच्चे, यह तृप्त गृहस्थी, सब उस माँ के आधार पर ही प्राप्त हुआ है । जाना ही है । जितनी जल्दी संभव हो , मुझे उसके निकट पहुँचना ही होगा ।'

संगीता आग्रह पूर्वक माँ से मिलने पहुँच गयी । यों तो अब लौकिक या व्यावहारिकता के नाते उसका माँ के साथ कोई रिश्ता नहीं रहा था । सारे संबंध तोड कर ही संगीता उस घर की दहलीज के बाहर हो गयी थी । परन्तु माँ का और उसका रिश्ता एक अनाम बंधन था । इस रिश्ते की कोई संज्ञा नहीं यह तो एक भावनाभूति थी । यह रिश्ता था, प्रेम का, वात्सल्य का !

विवाह-बंधन से नये संबंध बनते हैं, ऐसा कहा जाता है, पर क्या यह सही है ? संगीता और संजय के विवाह से, दोनो एक-दूसरे से जुडे थे । पर वास्तव में आंतरिक धागा जुडा था माँ और संगीता का ।

दो-तीन दिन पूर्व ही शराब के नशे में कार चलाते हुए संजय की कार पेड से टकरा गयी थी । उसीसे उसका प्राणांत हो गया । इसी कारण संगीता माँ से मिलने आतुर थी ।

संगीता ने उस प्रशस्त हाल में धीरे से ही कदम रखे । उसे देखते ही, वहाँ एकत्र सब लोग जैसे स्तब्ध रह गये, सब के शद्ब मुँह में ही रह गये । उस हाल में नीरवता छा गयी । लगा कि सब पर बिजली गिर गयी है । संगीता और प्रसन्न के लिए यह अपेक्षित ही था । लेकिन तब संगीता संकोचवश दरवाजे पर ही खडी रह गयी । भीतर जाने के लिए उसके पैर ही नही उठ रहे थे । वैसे तो यह घर, यह हाल सब कुछ उसका सुपरिचित ही था ।एक समय वह इस ऐश्वर्य की स्वामिनी ही थी, संसार की दृष्टि में ! पर आज वह संकोच से भरी दरवाजे पर ही खडी थी, क्योंकि वहाँ एकत्रितों में उसका कौन था, वह तो अब पराई थी ! इस घुटे घुटे वातावरण के कारण संगीता का मन जैसे घिर गया था । उसे कंपकंपी जैसा लगने लगा गला सूख गया । उसे लगा कि यहाँ आने में कोई गलती तो नहीं हो गयी है । वह बेचैन हो गयी । प्रसन्न उसके पीछे दरवाजे में ही खडा था । संगीता की मानसिक स्थिती वह जान गया । उसने संगीता के कंधे पर हाथ रखकर सहारा दिया । उसने पीछे मुडकर प्रसन्न की ओर देखा । उसकी आँखों में हमेशा की तरह आश्वासनपरक स्मित था ।

हाल में हुए वातावरण के अचानक परिवर्तन को कुन्दाबाई ने झुकी गर्दन से ही देखा । गर्दन उठाकर उसने दरवाजे की ओर देखा । आँखों में उतरते पानी के कारण दरवाजे पर खडी संगीता की मौन मूक प्रतिमा उसे थरथराती इुई प्रतीत हुई । गल भर आया । सारा दुःख मानो उफनकर बाहर आ गया । एकाएक अनजाने ही कुन्दाबाई 'संगीता !' पुकार उठी और हाथ बढा दिये ।

कुन्दाबाई की इस आर्त पुकार से संगीता मानो अन्तर्बाह्य काँप उठी । इस आर्त स्वर में क्या नही था ? सात-आठ वर्ष के वियोग की पीडा, माँ का पुत्र विषयक उछलता प्रेम और दुःख के अतिरेक से किसी न किसीके आधार ! सहारे की त्वरा ! माँ के इस संबोधन से, इस शद्ब से संगीता में बल का संचार हुआ और 'माँ....' स्वर के विस्फोट से संगीता विद्युत् गति से माँ की गोद में समा गयी।

दोनों ही एक दूसरे से चिपक कर रो रही थी । माँ का सारा शरीर हिचकियाँ लेने लगा था ! इतने दुःख का आवेग संजय की मृत्यु के बाद अबतक नहीं आया था । मानो दुःख का बांध टूट पडा। आज संगीता को अपने निकट पाकर सारा आक्रोश, सारी हताशा, हिचकी और आँसुओं के रूप में बह रहे थे !

आठ वर्ष पूर्व भी ये दोनों इसी प्रकार आपस में गले से लगकर रो रही थी, क्योंकि संगीता को, परमप्रिय बेटी जैसी बहू को शिक्षण के लिए एक श्राविकाश्रम में छोडने गयी थी ।

दोनों को इस तरह रोते, सिसकते देखकर दो-एक स्त्रियाँ आगे आयी और दोनों की पीठ पर हाथ फेरते हुए बोली, 'रोओ मत, जानेवाला तो गया । आखिर देव और गुरू की साक्षी में जुडे हुए सम्बन्ध कागजों पर सही करने से थोडे ही खत्म हो जाते है ? आखिर

संगीता आ ही गयी, आंतरिक भावना से ! तुझसे भी तो नहीं रहा गया !'

इस बात से संगीता एकदम सावधान हो गयी । उसने गर्दन उपर उठाकर आँखें पोंछी । प्रसन्न के सामने, इन स्त्रियों को इस तरह बोलना शोभा देता है ? संगीता अपने पति प्रसन्न की ओर देखने लगी । वह हमेशा की तरह स्वस्थ था, मुस्करा रहा था । आखिर प्रसन्न का सन्देह ही सही था !

माँ संगीता का हाथ कसकर पकडे थी । उस हाथ के स्पर्श से माँ मानो सहारा ढूँढ रही थी । अगल-बगल में बैठे रिश्तेदारों तथा अन्य लोगों की चर्चा चल रही थी । दुर्घटना कैसे घटी यही चर्चा का विषय था । स्वाभाविक ही संगीता और माँ के कानों पर शद्ध पड ही रहे थे । पर दोनों का ही मन भूतकाल में चला गया था ।

कितनी उम्मीदों से, हौसले से कुन्दाबाई ने संजय और संगीता का दाम्पत्य जोडा था । कितने सपने संजोये थे उन दोनो के सुखी जीवन के । गोद मे बच्चे खिलाने के ! किंतु ताश के महल की तरह सारे सपने हवा हो गये ।

संगीता उसे खूब जंची थी । देखते ही कुन्दाबाई ने उसे मन ही मन अपनी बहू मान लिया था । उन्होने संगीता के विषय मे संजय से बात की तो संजय ने कहा था, 'माँ, तुम्हे पसंद है न ! तब सब ठीक है ।' मानो उसके लिए पसंद-नापसंद का कोई सवाल ही नही था । संगीता के माता-पिता नही थे; अतः मामा-मामी के पास रहने से इनकार करने का प्रश्न ही नही था । पन्दह दिनो के बाद संजय-संगीता का विवाह हो गया । कुन्दाबाई ने ही आगे होकर उत्साहपूर्वक विवाह कराया । संगीता को भी कुन्दाबाई के रूप मे माँ मिल गयी । अपने नम्र स्वभाव से उसने मामी यानी माँ या सास के मन को जीत लिया ।

संजय कुन्दाबाई का इकलौता बेटा था । चार वर्ष पूर्व ही संजय के पिता का देहांत हो गया था । पूवोपार्जित सम्पत्ति आदि के कारण बाप-बेटे दोनो ऐश मौज में रहे थे, व्यसनी हो गये थे । ऐसे मे चिडचिडापन और विक्षिप्तता जोर पकड लेती है । व्यवहार बदल जाता है । उजड्डता बढ जाती है । सारे संसार को तुच्छ समझने की वृत्ति हो जाती है । दोनो बाप-बेटे ने कभी किसी की परवाह नही की। दूसरो की भावनाओं का कभी आदर नही किया । दोनो ने जीवनभर कुन्दाबाई को सताते रहे, उन्हे कभी शांति से नही रहने दिया । अति सम्पत्ति-वैभव के कारण घर मे ही पिता के आदर्श के बहुत आगे निकल गया था ।सप्त व्यसनो मे से शायद ही कोई व्यसन छूटा होगा । इस बारे में तो वह अपने खानदान की परम्परा ही आगे चला रहा था । कुन्दाबाई भी बार बार समझाकर, रो-धोकर हार गयी थी । उन्होने तो संजय के विवाह का विचार ही त्याग दिया था। पर संगीता को देखते ही उनकी सारी आशा-अपेक्षाएँ जाग गयी और तरह-तरह के सपने देखने लगी । संगीता बहुत नम्र और मधुरभाषी लडकी थी । कुन्दाबाई ने सोचा कि इस लडकी के सहवास से संजय रास्ते पर आ जायेगा ! यह नम्र और मितभाषी संगीता संजय को अपने वश मे कर लेगी । ये कोमल, सुकुमार कदम जब आंगन मे थिरकेंगे तब संजय का मन भी घर मे रमेगा ! इस हुरहुरी कल्पना मे कुन्दाबाई मगन हो गयी ।

किंतु विवाह के कुछ समय बाद ही कुन्दाबाई के सारे सपने बिखर गये, चूर-चूर हो गये । संगीता के रूप मे संजय के चारों ओर लिपटा रेशमी जाल भी उसे बांधकर नहीं रख पाया । उसकी चालढाल में लेश मात्र भी अंतर नहीं पडा । उसका बरताव पूर्ववत् रहा । बल्कि विवाह के बाद व्यसन बढते ही गये । घर में आने पर मुँह छिपाता रहता । वह रातरात भर घर से बाहर रहने लगा । इधर संगीता रातभर राह जोहती रहती । कुन्दाबाई की आँखों में भी नींद कहाँ ! उन्होने भी तो अपनी तरुणावस्था एकाकी बिताई थी । और आज बेटे के कारण भी उनकी नींद हराम थी । संगीता के विषय में करूणा और ममता से कुन्दाबाई का मन दुःखी था । बेटे और बाप की और कुल मिलाकर पुरूष जाति के प्रति मन में चिढ उग्र हो रही थी। कभीकभी रात के बारह-एक बजे संजय घर आता, तो कुन्दाबाई को लगता कि उसके गाल पर जोर से थप्पड मार दी जाय । घर में स्थित ऐसी कस्तूरी छोडकर कहाँ विष्टा खाते भटकता रहता हैं वे उत्तेजना में खडी होती, पर लगता कि पैरों की शक्ति जवाब दे रही है और धडाम से बैठ जाती । इतने वर्षो के अनुभवों से उनकी समझ में आया कि संजय से बोलने का मतलब है अपना ही गला चांपना । शराब के नशे में वह क्या कर बैठेगा, कौन जाने ! रात के समय लोगों को तमाशा दिखाने का कोई मतलब नही ।

दोनों के चार हाथ हो गये, जिम्मेदारी बढ गयी । प्रेम की आर्द्रता मिली तो संजय का अमर्यादित आचरण सुधर जायेगा, यह आशा आखिर व्यर्थ हो गयी । संजय को न तो माँ के दुःख की चिंता थी, न संगीता के प्रेम का स्मरण रहा । संगीता ने संजय का मन अपनी ओर, घर की ओर लगाने का भरपूर प्रयत्न किया, पर पत्थर में कहीं अंकुर फूटता है ? उसपर तो सिर पटकने पर माथा ही फूटता है । संगीता का प्यार का नाजुक फंदा भी संजय को बांधकर न रख सका ।

कभी कभी कुन्दाबाई को अपने व्यवहार पर बहुत अफसोस होता था । वह अपने को ही दोषी मानती थी । उन्हें बारबार लगता था कि बेटे का जीवन सुधारने के मोह में मैंने इस सोने जैसी लडकी का जीवन धूल में मिला दिया है । बेटे का स्वभाव और चालचलन जानते हुए भी मैने इस गरीब गाय के साथ छल किया है । बेचारी जवान लडकी ! नयी नवेली बहू ! न घूमना-फिरना, कभी सिनेमा-नाटक नहीं, बाजार नहीं । संगीता मानों उसकी कोई नहीं ! माँ एक बहू चाहती थी, इसीलिए संगीता का विवाह रच दिया । संगीता की भावना जैसे मर गयी । पर संजय अपने पतित्व के प्रदर्शन से चूकता नहीं था ।

संजय अत्यन्त शंकाशील स्वभाव का था । वह संगीता पर तरह तरह के आरोप मढता रहता । कहाँ गयी थी, घर में कौन आया था, दिनभर क्या करती रही- ऐसे टेढेमेढे प्रश्न करके उसपर रौब

जमाता । कई बार संगीता पर हाथ भी उठा देता । दिन पर दिन संगीता भीतर ही भीतर दुःखी होती रही । पर संगीता ने स्वयं माँ से कभी कुछ नहीं कहा । मायके का कोई अवलंब / सहारा न होने से संगीता को परिस्थितीयों ने अधिक ही मजबूर कर दिया था । कुन्दाबाई सब देख-समझ रही थी, पर अपने ही दाँत और अपने ही होंठ ! बोले क्या ?

इसी तरह दो वर्ष बीत गये । परिस्थिती की आंच और संगीता के पश्चाताप से कुन्दाबाई का जीवन झुलस गया । अपने सामने ही उस अश्राप लडकी का जीवन बरबाद हो रहा है- इस विचार से कुन्दाबाई की नींद उड गयी थी ।कभी कभी उन्हें लगता कि हमारे इस खानदान को किसी का शाप लगा है कि इस घर में पैर रखने वाली हर बहू को ऐसा दुःख सहना पडता है । कुन्दाबाई की सास को भी यह सब भोगना पडा था । कुन्दाबाई भी भुक्तभोगी रही । और अब संगीता को भी यह सब भुगतना पडरहा है । इस सुकुमार तरूणी के सामने पूरा जीवन पडा है, क्य वह इसी तरह बीत जायेगा ? इस कल्पना से ही वह काँप उठती । भविष्य की भीषण छाया उन्हें भयभीत कर रही थी ।

कुन्दाबाई की मुंदी आँखों के सामने रात खडी थी । उस दिन रात में एक बजे संजय घर आया, तब उससे ठीक से खडा भी नहीं रहा जा रहा था । संगीता ने उसे अंदर लिया । कुन्दाबाई जाग रही थी । लडखडाते हुए संजय को लक्ष्य करके संगीता ने कुछ कहा और संजय एकदम भडक उठा । अंटशंट चाहे जैसा बकने लगा । संगीता के किंचित विरोध करने पर संजय ने उसकी ओर दौडकर गला दबाने का प्रयास किया । संगीता 'माँ' कहकर जोर से चिल्लाई । कुन्दाबाई बिस्तर पर पडे पडे ही समझ रही थी । संगीता की चीख-पुकार सुनते ही वे दौड गयी और किसी तरह उसे लेकर बेडरूम के बाहर आ गयी और संजय के सम्हलते-सम्हलते बेडरूम का दरवाजा बाहर से बन्द कर दिया ।

संगीता भय से, शर्म से काँप रही थी, रोते हुये खडी थी। उसे इस प्रकार अधमरी अवस्था में रोते देखकर कुन्दाबाई की छाती धडकने लगी । संगीता को ममता से पास खींचकर अन्तःकरण का सारा बांध टूट गया । माँ के आँचल में सिर रखकर वह और रोने लगी । माँ भी अपने को रोक न सकी । पिछले दो वर्षो में भोगे गये दुःख का संग्रह आँसुओं के रूप में बह चला । उसी रात दोनों का सास-बहू का रिश्ता टूट गया और दोनों माँ-बेटी बन गयी । संगीता का सिर अपनी गोद में रखकर कुन्दाबाई विचार कर रही थी । उस प्रसंग ने कुन्दाबाई का और पर्याय से संगीता का भी जीवनपथ बदल डाला ।

संजय जोर जोर से धक्का देकर दरवाजा खोलने का प्रयास कर रहा था, चिल्ला रहा था । पर बाहर से बंद होने के कारण वह खोल नहीं पा रहा था ।

कुन्दाबाई को इस घटनाने नई दिशा दी । अबतक तो संगीता की दशा पर उन्हें तरस आता था, दया आती थी । ऐसा भी लगता था कि उसके लिए कुछ करना चाहिए । लेकिन कर क्या सकती हूँ ? लडकी का भाग्य ही खराब है ! हताश, निराश हो जाती थी । पर अब संजय को घर में बंद करके मानो शेर को पिंजरे में बंद कर दिया है । चीख-पुकार के अलावा वह अब कर भी क्या सकता था ? वह ऐसी रात थी कि मानसिक बधिरता की, सुनसान स्थिती में कुन्दाबाई को एक स्पष्ट और नया मार्ग सूझा । संगीता के लिए क्या करना है, यह विचार निश्चय की ओर बढता गया । निश्चय कर लिया ।

मैं तो अबतक जैसी बीती, अपने जीवन को कष्ट, अपमान झेलकर बिता दूँगी, पर बेचारी संगीता के जीवन को इस तरह बरबाद नही होने दूँगी । मेरे लिए कोई सहारा नहीं था , संजय भी छोटा था । शायद मेरी नियति ही ऐसी थी । पर अब तो मैं ही संगीता का आधार बनूँगी । उसे अपने पैरों पर खडा करना है और मैं उसके लिए जो भी होगा करूँगी ।

कुन्दाबाई ने तत्काल मन ही मन निश्चय कर लिया । संगीता को उठाकर बैठाया । रोरो कर उसकी आँखें सूज गयीं थी । उसकी आँखे पोंछी । माँ ने उसके माथे पर हाथ फेरा और कहा, 'संगीता बेटी, उठो । रोते मत बैठो ! आँखों से बहते पानी से नियति की रेखा बदलती नही है । यदि रोती रहेगी तो मेरी तरह ही तेरे भाग्य में भी रोनाही रोना रहेगा । अपने दो-चार कपडे और आवश्यक सामान ले और चल ।'

'माँ जाना कहाँ है ?'

'अब तू मुझसे पूछ मत । सब रास्ते में बताऊँगी ।'

दोनों ने जरूरी सामान लिया । कुन्दाबाई ने तिजोरी में रखी सारी राशि, संगीता के जेवर, अपने जेवरले लिये और धीरे से बेडरूम की संकल खोल दी । संजय नशे में चिल्लाचिल्लाकर थक गया था और अस्तव्यस्त हालत में पलंग पर पडा था । एक बार तो माँ का हृदय करूणा से भर आया था, पर अगले ही क्षण मन को रोका । शाल लपेटी और सूटकेस उठा ली ।

अब दोनों माँ-बेटी घर के दरवाजे से बाहर निकल पडी । सबेरे के चार बजे थे । बस स्टैंड पर आकर कुन्दाबाई ने कारंजा की बस पकडी और दो घंटे के रास्ते में संगीता को धीरे धीरे सबकुछ समझा दिया ।

कारंजा में महिलाओं के लिए ही एक आश्रम था । उस श्राविकाश्रम की संचालिका आशाबाई कुन्दाबाई की बाल मित्र । जब भी किसी कार्यवश आशाबाई अकोला आती तो कुन्दाबाई से अवश्य मिलती ।इस से कुन्दाबाई को आश्रम विषयक अच्छी जानकारी थी । आश्रम में अनाथ, असहाय स्त्रियों के रहने और भोजन की व्यवस्था थी । नौकरी करनेवाली, शिक्षा प्राप्त करनेवाली, अपने पैरोंपर खडे रहने के लिए दौड धूप करने में प्रयत्नशील, जिन का कोई सहारा नही है, ऐसी अनेक स्त्रियों को उस आश्रम में आश्रय मिलता था । प्रबन्धकों के निरलस भावना के कारण यह सेवा कार्य चल रहा था । आशाबाई में सेवा की लगन थी, अतः उन्होंने संचालन

का भार स्वीकार कर लिया था। कुन्दाबाई ने संगीता को पास रखने का निश्चय किया। उसके आगे के शिक्षण की व्यवस्था करनी थी। आगे शिक्षण प्राप्त कर संगीता अपने पैरों पर खडी हो, यह भावना कुन्दाबाई की स्वाभाविक ही थी।

कुन्दाबाई और संगीता दोनों सबेरे सबेरे श्राविकाश्रम पहुँच गयी। कुन्दाबाई ने आशाबाई को विश्वास में लेकर सबकुछ बता दिया। सुनकर आशाबाई तो एकदम स्तब्ध रह गयी। बोली,

''कुन्दा, आज तक हमारे यहाँ आधार के लिए माँए बेटियों को लाती रही हैं। पर तुम तो सास होकर बहू को लानेवाली पहली महिला हो ! तुम दोनों का माँ-बेटी का यह अनोखा ही रिश्ता कहा जायेगा न !''

''अरी आशा , अब हम न तो माँ-बेटी है, न सास-बहू ! हम दोनों को एक सूत्र में बांध रखा है दुःख, उपेक्षा, वेदना के धागे ने। मैंने जीवनभर जो भोगा, सहा है, वह यह अशापित लडकी तो न भोगे, इसीलिए यह प्रयास है।अपनी गलती का प्रायश्चित्त मुझे ही तो करना होगा न ! खैर, यह सब छोडो ! पहले यह बताओ कि आगे संगीता के लिए क्या किया जाय ! मेरे पास समय बहुत कम है। संजय के जागने के पूर्व मुझे घर पहुँचना होगा। तब उसे मै बता सकूँगी कि संगीता अकेली कहाँ निकल गयी पता नहीं। संजय को पता नही चलना चाहिए कि संगीता यहाँ है, नही तो वह यहाँ भी उसे चैन से नहीं रहने देगा।''

''कुन्दा, संगीता ग्रेज्युएट (स्नातिका) है, फिर भी कोई प्रशिक्षण किये बिना उसे सहज ही नौकरी मिलना कठिन होगा। यदि वह बी. एड. कर ले तो फिर हमारी संस्था में भी उसे समाहित किया जा सकता है।''

कुन्दाबाई ने साथ लाये सारे गहने आशाबाई को सौंप दिये।

''आशा, यह हम दोनों का स्त्री-धन है। इससे संगीता का जीवन निर्माण करना है। अब मैं निकलती हूँ ! संगीता की कोई माँ नहीं है, अब तुम ही उसकी माँ हो, सबकुछ हो। बीच बीच में बने जहाँ तक मैं आती रहूँगी। पर बार बार आना संभव नहीं दिखता, क्योंकि संजय को संदेह हो सकता है।''

कुन्दाबाई के निकलते ही संगीता उनसे लिपट गयी और बिलखने लगी। कुन्दाबाई ने मन पक्का किया, संयम रखा और आशाबाई से कहा,

''शिक्षण के साथ साथ ही संगीता को तलाक प्राप्त करने का भी प्रयत्न करना।''

एक-दूसरे से लिपटते ही संगीता और कुन्दाताई सारे संसार का भान बिसर कर भूतकाल में चली गयी थी।

एक वर्ष में संगीता ने प्रशिक्षण समाप्त कर लिया। श्राविकाश्रम से ही संचालित विद्यालय में उसे नौकरी मिल गयी। कुन्दाबाई ने संजय का क्रोध और विरोध सहन कर अकेली ने संगीता को तलाक प्राप्त करा दिया।

श्राविकाश्रम में नौकरी करते हुए ही प्रसन्न संगीता के सम्पर्क में आया। अतीव शीलवान् और चारित्र्यवान् था प्रसन्न, और था आशाबाई का भानजा। संगीता के पूर्व जीवन की जानकारी होने पर वह भी वह उसके साथ विवाह करने को उत्सुक था।

प्रसन्न की यह इच्छा आशाबाई ने कुन्दाबाई तक पहुँचा दी। तब कुन्दाबाई ने अगुआपन अपनाकर दोनों का विवाह करा दिया। संगीता को हर तरह से समझाकर, उसे मानसिक रूप से तैयार कर दिया था। संगीता को प्रसन्न के रूप में एक सामंजस्यपूर्ण, दृढनिश्चयी जीवन-साथी मिल गया।

अब संगीता की जीवन-लता प्रसन्न के सहयोग से तथा सपना एवं सुयोग इन दो प्यारे से बच्चों से लहलहा रही थी। जीवन हरा-भरा हो गया था। संगीत और प्रसन्नता एक-दूसरे के पोषक, पूरक हैं ही ! यह जो कुछ भी हुआ, वह माँ के आशीर्वाद का फल है, यह संगीता जानती थी। और इसी कारण इस दुःख के प्रसंग पर दौडते हुए माँ के पास पहुँची थी। प्रसन्न और संगीता जब लौटने को हुए तब कुन्दाबाई के आँसू थमते ही नहीं थे।

''अब तो मैं नितान्त अकेली पड गयी संगीता यों तो मैं जीवनभर अकेली ही रहती आयी। बीच में दो वर्ष तक थोडा विश्राम मिला, बस उतना ही। पर तब भी मुझे मनःस्ताप का, यातना का, कष्ट का साथ था ही। पर अब तो वह भी नही रहा ! अब किसी तरह की चिंता-फिकर तो नहीं है, पर शून्यता, रिक्तता तो काटने दौडती है।''

यह सब सुनकर संगीता का हृदय टूक टूक होने लगा। वह कुछ बोलती, उसके पहले ही प्रसन्न बोल पडा,

''माँ यहाँ आपके सब नाते-रिश्तेदारों के बीच रहना कुछ कठिन है, अतः हम जा रहे हैं। चहाँ बच्चे बाट जोह रहे होंगे। माँ, अब आप यहाँ अकेली न रहें। हमारे साथ कारंजा चले। संजय का शोक निवारण समाप्त होने पर मैं आपको लेने आऊँगा। अब आपको हमारे साथ ही रहना है।''

कुन्दाबाई का गला भर आया, किसी तरह रूंधे गले से बोली,

''आऊँगी ! अब मै कारंजा ही आनेवाली हूँ। यहाँ की सारी गृहस्थी समेट कर, बाँट बूट कर आ जाऊँगी। मन में होता है कि सुयोग को कब देखूँ। पर रहूँगी मैं श्राविकाश्रम में ही। अपनी संपूर्ण सम्पत्ति भी मैं श्राविकाश्रम को अर्पित करने वाली हूँ। यदि मेरे योग्य कोई काम होगा तो मै वहाँ आनन्द से करूंगी। तेरे जैसी दो-चार दुःखी बहनें मेरे निमित्त सुख के दिन देख पायें तो मुझे खुशी होगी। जीवन के मेरे आखिरी चार दिन सन्तोष-समाधान पूर्वक बीतें, यही भावना है।''

और आँखें पोंछते हुए दोनों निकल गये।

सौ. मीना गरीबे (जैन)

2, शिवनेरी सहनिवास,

विजय सोसायटी,

गोरक्षण रोड, अकोला (महा.)